जीवन रथ के पहिए : शौर्य व धैर्य

रावण को रथ पर और श्रीरघुवीर को बिना रथ के देखकर विभीषण अधीर हो गये। प्रेम अधिक होनेसे उनके मन में सन्देह हो गया (कि ये बिना रथके रावण को कैसे जीत सकेंगे)। जब जब धैर्य की समाप्ति हो जाती है और भ्रम की स्थिति उत्पन्न होती है तब-तब गीता के आश्रय की आवश्यकता होती है । महाभारत युद्ध में भी जब अर्जुन किंकर्तव्य विमूढ़ हो गया तब भगवान कृष्ण ने अपने सखा अर्जुन को गीता का उपदेश दिया। राम – रावण युद्ध में अपने सखा विभीषण को भगवान श्री राम भी इसी प्रकार समझा कर उसकी शंका का समाधान करते हैं।
युद्ध भूमि में विभीषण ने भगवान को बिना रथ के और रावण को रथ पर आरूढ़ देखा तो बोला-

नाथ न रथ नहिं तन पद त्राना।
केहि बिधि जितब बीर बलवाना ।
(राम चरितमानस लंका काण्ड ८०.३)
श्री राम ने विभीषण को विजय पथ पर अग्रसर होने वाले रथ का वर्णन करके समझाया

सोरज धीरज तेहि रथ चाका।
सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका।
बल बिबेक दम परहित घोरे।
छमा कृपा समता रजु जोरे।।
(राम चरितमानस लंका काण्ड ८०.५-६)
भावार्थ-शौर्य और धैर्य उस रथ के पहिये है।सत्य और शील (सदाचार) उसकी मजबूत ध्वजा पताका हैं। बल, विवेक, दम (इन्द्रियोंका वशमें होना) और परोपकार- ये चार उसके घोड़े हैं,जो क्षमा, दया और समतारूपी डोरीसे रथमें जोड़े हुए हैं॥

पहिए का आविष्कार महत्वपूर्ण अविष्कार माना जाता है क्योंकि पहिए के आविष्कार से ही आज मानव जीवन गति कर रहा है यदि पहिए का आविष्कार ना होता तो आज दुनिया इतनी तरक्की नहीं करती और एक जगह रुक कर रह जाती पहिया आदिमानव काल में भी उतना ही उपयोगी था जितना आज के मशीनी युग में हैं ।

जीवन के महासंग्राम के योद्धा जिस रथ पर आरूढ़ होकर विजयश्री का आलिंगन करने के लिए आतुर है,

श्री राम ने बताया की उस विजय रथ के 'शौर्य' और 'धैर्य' दो चक्के हैं।
सोरज धीरज तेहि रथ चाका
(राम चरितमानस लंका काण्ड ८०.५)

शौर्य और धैर्य का सामंजस्य ही रथ संचालन को सुगम बनाता है , यही जीवन पथ पर अग्रसर होने के लिए सहायक है।
शौर्य- तात्पर्य है शूरवीरता अथवा पराक्रम ,साहस। यहां 'शौर्य' शक्ति और साहस का द्योतक है तथा 'धैर्य' संतुलन का द्योतक है। किसी वाहन के कुशल चालन में उसकी शक्ति और उसका संतुलन कितना आवश्यक है इस को अलग से बताने कीआवश्यकता नहीं। बिना शक्ति के तो गति कल्पना करना ही व्यर्थ है। शक्ति और साहस के समन्वय में को ही 'शौर्य' कहते हैं।
किसी वाहन का उदाहरण लेकर हम समझें तो शक्ति इंजन है साहस गियर है ।

शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम्
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम्
(श्रीमद भगवत गीता १८.४३)
शूरवीरता, तेज, धैर्य, चतुरता और युद्ध में न भागना, दान देना और स्वामिभाव- ये सब-के-सब क्षत्रिय के स्वाभाविक कर्म हैं।।

गीता में भगवान ने बताया है जीवन के रण क्षेत्र में जो युद्ध कर रहे हैं उन (क्षत्रिय) में उक्त गुण होने जरूरी है तभी विजय संभव है।
'शौर्यम्'-मनमें अपने धर्म का पालन करनेकी तत्परता हो, धर्ममय युद्ध प्राप्त होने पर युद्धमें चोट लगने, अङ्ग कट जाने, मर जाने आदि का किञ्चित मात्र भी भय न हो, घाव होने पर भी मनमें प्रसन्नता और उत्साह रहे तथा सिर कटने पर भी पहले-जैसे ही अस्त्र-शस्त्र चलाता रहे, इसका नाम 'शौर्य' है। जीवन रूपी संग्राम में अनेक प्रकार के उतार-चढ़ाव ,अनेक प्रकार की बाधाएं आएं लेकिन उत्साह में कमी नहीं होनी चाहिए।

उत्साहसम्पन्नमदीर्घसूत्रं,क्रियाविधिज्ञं,व्यसनेष्वसक्तम् ।
शूरं, कृतज्ञं,दृढ़सौहृदं च,लक्ष्मी:स्वयं याति निवासहेतो:।
उत्साही, आलस्यरहित, कार्य करने के उपायों को जानने वाला, विषयों में अनासक्त, वीर और कृतज्ञ, तथा जिसकी मित्रता दृढ़ है-ऐसे मनुष्य के पास रहने की इच्छा से लक्ष्मी स्वयं ही आती है॥
(हितोपदेश)

धीरज – धारण शक्ति या धैर्य। धैर्य के बिना रथ की गति को नियंत्रण कैसे करेंगे ?मनुष्य कभी धैर्यको धारण करता है और कभी (प्रतिकूल परिस्थिति आनेपर) धैर्यको छोड़ देता है। कभी धैर्य ज्यादा रहता है और कभी धैर्य कम रहता है । मनुष्य कभी अच्छी बातको धारण करता है और कभी विपरीत बातको धारण करता है।

विपरीत-से-विपरीत अवस्थामें भी अपने धर्मसे विचलित न होने और शत्रुओंके द्वारा धर्म तथा नीतिसे विरुद्ध अनुचित व्यवहारसे सताये जानेपर भी धर्म तथा नीति विरुद्ध कार्य न करके धैर्यपूर्वक उसी

मर्यादामें चलनेका नाम 'धृति' है।

धृत्या यया धारयते मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः।
योगेनाव्यभिचारिण्या धृतिः सा पार्थ सात्त्विकी।
(श्रीमद भगवत गीता १८.३३)
हे पार्थ! जिस अव्यभिचारिणी धारणशक्तिसे मनुष्य ध्यानयोगके द्वारा मन, प्राण और इन्द्रियों की क्रियाओं को धारण करता है वह धृति सात्विकी है।

साधन पर पर शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध—इन विषयोंको लेकर इन्द्रियोंका उच्छृङ्खल न होना, जिस विषयमें जैसे प्रवृत्त होना चाहें, उसमें प्रवृत्त होना और जिस विषयसे निवृत्त होना चाहें, उससे निवृत्त होना ही धृतिके द्वारा इन्द्रियोंकी क्रियाओंको धारण करना है
यही धीरज है।।
'कदर्थितस्याऽपि च धैर्यवृत्ते-
र्बुद्धेविनाशो न हि शङ्कनीयः ।
अधःकृतस्याऽपि तनूनपातो
नाऽधः शिखा याति कदाचिदेव' ॥ ६६ ॥
यदि धीर मनुष्य का अनादर भी हो, तो भी उसकी बुद्धि के विनाश की शङ्का नहीं करनी चाहिए। क्योंकि अग्नि को नीचे की ओर करने पर भी उसकी शिखा (ज्वाला)नीचे की और कदापि नहीं जाती है । किन्तु अग्नि की शिखा (ज्वाला) सदा ऊपर को ही जाती है ।
(हितोपदेश)

सुव्याहृतानि धीराणां फलतः परिचिन्त्य यः ।
अध्यवस्यति कार्येषु चिरं यशसि तिष्ठति ॥
जो धीर पुरुषोंके वचनोंके परिणामपर विचार करके उन्हें कार्यरूपमें परिणत करता है, वह चिरकालतक यशका भागी बना रहता है॥

सन्तोषाऽमृततृप्तानां यत्सुखं शान्तचेतसाम्।
न च तद् धनलुब्धानामितश्चेतश्च धावताम्॥
जो व्यक्ति संतोषरूपी अमृत से तृप्त है, मन से शांत है, उसे जो सुख प्राप्त होता है, वह धन के लिए इधर-उधर दौड़-धूप करने वाले को कभी प्राप्त नहीं होता।

***
लेखक बीकानेर में रहते हैं और अध्यात्मिक विषयों पर लिखते हैं।